ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-1* Issue-12* March- 2017
**Anthology : The Research**

# स्वातन्त्र्योत्तर हिंदी नाटको में लोकतंत्र की आड़ में मानवीय मूल्यों का ह्रास

**उदारता**
असिस्टेंट प्रोफेसर,
हिंदी विभाग,
के. के. पी. जी. कालेज,
इटावा

**सारांश**

हिंदी साहित्य में नाटक सबसे प्राचीन विधा है । भारतेन्दु युग से लेकर आज तक अनेक नाटकों का प्रणयन हुआ । नाटक एक ऐसी विद्या है जिसमे पात्रों के माध्यम से रचनाकार अपने विचारों को पाठक एवं दर्शक तक पहुंचाने की चेष्टा करता है । आचार्य भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र नामक ग्रन्थ की रचना की जिसमे उन्होने 'विभावानुभाव व्यभिचारी संयोगाद्रस निष्पत्ति' के माध्यम से नाटक में रसानुभूति की भी अभिव्यंजना की है । साथ ही नाटक को पंचम वेद कहा है ।

**मुख्य शब्द :** मानवीय मूल्य, आत्मोत्सर्ग, प्रसन्नहीनता, अभिनयात्मक

**प्रस्तावना**

**'न तज्ज्ञानं न तच्छिल्यं न सा विद्या नसाफला ।**
**नासौ योगोन तत्कर्म नाट्येऽस्मिनयन्न द्रश्यते ।।**

'नाट्यशास्त्र' के प्रणेता भरत मुनि ने नाट्य की व्यापकता के सम्बन्ध में कहा है कि – ऐसा न कोई ज्ञान है, न शिल्प है, न कला है, न विद्या है, न योग है, न कर्म है जो नाटक में न देखा जाता हो ।

रूपक के तत्वों का प्रतिपादन करते हुए 'नाट्यशास्त्र' लिखता है – एक बार वैवस्वत मनु के दुसरे युग में लोग बहुत दुरूखित हुए। इस पर इंद्र तथा दूसरे देवताओं ने जाकर ब्रम्हा से प्रार्थना की – आप मनोरंजन का कोई ऐसा साधन उत्पन्न कीजिये जिससे सबका चित्त प्रसन्न हो सके । इस पर ब्रम्हा ने चारों वेदों को बुलाया और उन चारो की सहायता से नाट्य पंचम वेद के रूप में रचित हुआ । इस नए वेद के लिए ऋग्वेद से संवाद , सामवेद से गान, यजुर्वेद से नाट्य और अथर्वेद से रस लिया गया था।"

**अध्ययन का उद्देश्य**

प्रस्तुत शोधपत्र में स्वातंत्रोत्तर नाटकों में विशेष रूप से डॉ0 लक्ष्मीनारायण लाल के नाटकों में मानवीय मूल्यों का ह्रास दिखाया है जैसे मिस्टर अभिमन्यु एवं अब्दुल्ला दीवाना उनकी इसी प्रकार की प्रस्तुति है।

नाटक एक त्रिआयात्मक विद्या है , जिसमें नाट्यकृति, प्रस्तुतिकरण एवं प्रेक्षक तीनो का समन्वय नाटकीय प्रस्तुतिकरण एवं प्रेक्षक तीनो का समन्वय नाटकीय कलात्मकता के लिए अपेक्षित है। नाटक में जीवन का इतना व्यापक अनुकरण होता है कि उससे कुछ भी छूट ही नहीं पाता । इस द्रष्टि से अनेक कलाओं के योग से विकसित होने वाली कला ही नाट्यकला है। समाज का ऐसा कोई भी वर्ग नहीं है जो इस कला से छूट पाता है कालिदास ने 'मालिविकाग्निमित्रं नाटक के प्रथम अंक में गणदस से कहलाया भी है कि 'भिन्न रूचि वाले लोगो के लिए नाटक ही ऐसा रंजन है जिसमे सभी को आनंद प्राप्त होता है। आनंद प्राप्ति का कारण है कि सभी मनुष्यों को अद्‌भुत द्रश्य तक जीवनुभूतियों का अनुकरण देखने में बहुत कुछ उपलब्ध होता है।

नाट्य शास्त्र के प्रथम अध्याय में इस बात पर अनेक बार हमारा ध्यान केन्द्रित किया है ' नाट्यवेद ' को पंचमवेद घोषित करते हुए ' भरत ' ने इसे देवता , मनुष्य , असुर सभी चरित्रों का अनुकरण स्वीकार किया है। इतना ही नहीं उन्होंने नाटक की कथा वस्तु को समस्त तीनों लोकों के भावों का अनुकरण भी माना है।

भरतमुनि ने तीनों नाटकीय आयामों– रचनात्मक ,अभिनयात्मक तथा प्रभावात्मक तीनों की विशद विवेचना की है नाटक की संश्लिष्ट कलात्मकता, प्रभविष्णुता और संवेदन क्षमता का व्यापक द्रष्टिकोण आचार्य ने यह कहकर दिया–

**"नानाभावोपसम्पन्नं , नानावस्थान्तरात्मकम् ।**
**लोकव्रत्तानुकरणम् नाट्यमेतन्मयाकृतम ।।"**

"कि अनेक भावों से संपन्न अनेक अवस्थाओं से युक्त लोकवृत्तनुकरण ही नाटक की मूल प्रवृत्तयात्मक गति है।"

नाट्यकला स्रजनात्मक अभिव्यक्ति का वह रूप है जिसमें नाट्यकृति का रंग मंच पर अभिनेताओं , रंगशिल्पियों की सहायता से दर्शक वृन्द के समक्ष प्रस्तुतीकरण होता है। यह प्रस्तुतीकरण कभी न्रत्य मूलक ,संवाद मूलक, संगीत मूलक तथा कभी समन्वित रूप से युक्त होता है। नाट्य के दो पक्ष होते है – काव्य रचना और प्रयोग। इसमें साध्य है रस और साधन है का अभिनय, संवाद तथा संगीत आदि, निमित्त है नट, भोक्ता है दर्शक, आधार है कथा और इन सबका प्रयोग करने वाले नाट्यकार और नाट्यप्रयोक्ता। दशरूपकार और भावप्रकाशकार ने भी इस प्रकार व्यक्त किया है– कि नाटक एक ऐसा खेल है जो मंच पर ही सार्थक होता है। वह पाठ्यवास्तु नहीं है । उसका प्रयोग किया जाता है और प्रयोग में जीवन के सभी तत्व और वर्ग समाहित रहते हैं।

आधुनिक नाटककार लक्ष्मीनारायणलाल ने लिखा है – "नाट्य कृति और रंगमंच एक दूसरे के कार्य और कारण हैं "दूसरे स्तर पर एक दूसरे के पूरक और यहाँ तक कि एक दूसरे के पर्याय भी हैं।

अभिनवगुप्त ने अभिनय के प्रसंग में लिखा है कि अनुभाव, विभाव और संचारी भावों का साम्प्राधान्य केवल अभिनेयकार्यों द्वारा संभव होता है। नाटक के अभिनय के समय रंगमंच का वातावरण, पात्रों के वाचिक, आंगिक एवं आहार्य अभिनय व क्रिया व्यापार से अह्र्दय सामाजिक भी सह्रदय के सद्रश अलौकिक रसास्वादन कर पता है। काव्य रसास्वादन में सबसे अधिक बाधक है। "निजसुखादिविवशभावां इस विध्न का आतोद्यगान, सुसज्जित रंगमंच, विदग्ध मणिकादि के द्वारा उपरंजन से निवारण होने पर आहरदय व्यक्ति भी सह्रदय के समान काव्य रसास्वादन करता है।

स्वाधीनता प्राप्ति और प्रजातांत्रिक व्यवस्था का शुभारम्भ भारतीय जनमानस के लिए अन्यी आशाएं, नयी उमंगों को जगाने वाली घटना रही है। साहित्य जनमानस का उच्छवास होता है इसलिए सन 1950 से लेकर आज तक प्रजातंत्रीय व्यवस्था के प्रति जनमानस में उद्देलित संवेदनाओ के साथ साहित्य भी अपने अर्न्तवाह्य रूप में परिवर्तित होता रहा है । हिंदी नाटक ने इसी समय से अपने नए बोध और रूप तलाशना आरम्भ किया है।

समकालीन नाट्य परिद्रश्य को समृद्ध करने में जहाँ एक ओर उपेन्द्रनाथ अश्क, प्रथ्वीनाथ शर्मा, विष्णुप्रभाकर, हरिकृष्णप्रेमी आदि स्वधीनता पूर्वकालीन – प्रसाद – प्रसादोत्तर कालीन नाटककार सक्रिय रहे तो दूसरी ओर जगदीशचन्द्रमाथुर, मोहन राकेश, शंकर शेष, लक्ष्मीनारायण लाल, सुरेन्द्र वर्मा, भीष्मसाहनी, धर्मवीर भारती , ज्ञानदेव अग्निहोत्री, रमेश बक्षी, लक्ष्मीकांत वमा , सत्यव्रतसिन्हा, विपिन कुमार अग्रवाल, मुद्राराक्षस, गिरिराज किशोर, हमीदुल्ला, ब्रजमोहन शाह , मणि मधुकर, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना आदि नए नाटककार सक्रिय ररहें है आठवें तथा नवें दशक में अपनी पहचान बनाने वाले नाटककारों में डॉ0 विनय, नरेन्द्र कोहली, कुसुम कुमार , म्रणाल पाण्डेय, मन्नूभण्डारी, नरेन्द्र मोहन , सुशीलकुमार सिंह , डॉ0 अज्ञात , शांति मेहरोत्रा, मृदुला गर्ग, ललित कुमार सहगल , दया प्रकाश सिन्हा, शरद जोशी, गिरीश रस्तोगी आदि उल्लेखनीय हैं।

नाटककार गिरिराज किशोर ने अपने नाटक 'प्रजा ही रहने दो' में महा भारत युद्ध के माध्यम से तत्कालीन समय की राजनीति के भ्रष्ट चरित्र तथा युद्ध की अमानवीयता तथा मानवी रिश्तों में आने वाली विसंगतियों का चित्रण किया जोह समकालीन राजनीति में व्याप्त मूल्यहीनता को व्यक्त करता है। नाटककार गिरिराज किशोर ने महाभारत के उस काल को संवेदना के स्तर पर लिया है और अपने नाटकों में उन गहन अनुभवों को सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया है । नाटककार ने जन्मजात अंधे धृतराष्ट्र व अंधेपन का व्रत पालन करने वाली गांधारी, अंधे शासक जिन्हे ना कुछ दिखाई देता है अर्थात जो आँखों के होते हुए भी अर्थात विवेक के रहते वास्तविकता नहीं देखना चाहते । इनकी नीतियाँ आज भी प्रजा को उसी युग की भाँति भटकाव के अतिरिक्त कुछ भी नहीं दे पातींद्य क्योंकि "सिंहासन होने की प्रबल इच्छा रखने वाले राज्य परिवार की पिपासा के अंध हाहाकार में शासित प्रजा की कुंठा और दिशाहीनता का भटकाव अपने दुखद उपसंहार के रूप में ऐसे महाभारत की सृष्टि करता है जिसकी कुलघाती नीतियों को बेधड़क जीवन की , कल्याणकारी धर्म नीतियों से अलंकृत किया जाता है । युगों पूर्व की वे लालसाएं महाभारत का युद्ध समाप्त हनी के साथ ही समाप्त नहीं हुईं , मानव की सहज प्रव्रत्तियों में घुल मिल कर वे आज भी किसी ना किसी रूप में जीवित हैं ।" महाभारत का युद्ध समाप्त हो गया है किन्तु वही स्वार्थ, वही शासकों द्वारा शोषण, व्यक्तिगत स्वार्थ हित में बंधुवापन, नाते रिश्ते आदर्शों को ताक पर रखने के कारण एक और युद्ध निरंतर चल रहा है ।

वर्तमान राजनिति में आम आदमी पूर्णतः महत्वहीन है। सब हवन कुण्ड में जलती अग्नि के लिए समिधाएं हैं । आज की राजनीति भी महाभारत युग की राजनीति की भांति कूटनीतिक शकुनि की विजय आज के भ्रष्ट व चरित्रहीन राज नेताओं की होने वाली वाह वाही को प्रकट करती है ।

डॉ0 लक्ष्मीनारायण लाल स्वातंत्रयोत्तर युग के नाटककारों में अग्रणी है उनके द्वारा कई नाटक लिखे गये है उनमें 'कलंकी' नाटक कथ्य एवं राजनीतिक परिस्थितियों की द्रष्टि से द्रष्टव्य है । इस नाटक की मूल संवेदनता केवल सम सामायिक ही नही युगीन भी है । नाटक का लक्ष्य प्रपंची शासन तंत्र को साकार परतिकों द्वारा अभिव्यक्ति देना है । हे रूप के स्वर में स्वयं नाटक कार के विश्वास एवं आस्था की अभिव्यक्ति हुई है । "नाटककार हेरूप की तरह जनता में प्रश्नों के बीज बो देना चाहता है , उन्हे यह समझा देना चाहता है की जब तक वे प्रश्नहीन बने रहेंगे, निरंकुश सत्ता का शोषण भी बना रहेगा । नाटककार के शब्द हेरूप बोलता है उसे सत्ता बंदी बनाकर विक्रम बिहार भेज देती है जहाँ उसकी म्रत्यु होती है, पर जनता में बोये उसके प्रश्नों के बीज नहीं मरते और इस प्रकार हेरूप मर कर भी अमर हो जाता है, अवधूत जीता हुआ भी मृत है । "प्रश्न एक

अंकुश है अंध तंत्र सत्ता पर । जन–जन के साधिकार प्रश्न , शासन की स्वायत्त उच्छंखलता के प्रतिबन्ध है । प्रश्नों से प्रतिबंधित होने पर । विद्रोह का अधिकार ही जन–जन के लिए विकल्प रह जाता है प्रश्नों का प्रतिबन्ध विद्रोह का प्रजनन है । जनतंत्र के व्यावहारिक प्रसार में प्रश्नों के विद्रोही भूमिका सदा ही रचनात्मक सिद्ध होती आई है । हेरूप की भी यही मान्यता है" नाटककार की भी यही मान्यता है ।

इस सम्पूर्ण योजना के द्वारा नाटककार का उद्देश्य भी जनता में चेतना लाना है जनता की निष्क्रिय प्रश्नहीनता और दुर्दान्त भाग्यवादिता से वह अपने को भी संत्रस्त अनुभव करने लगता है उसे लगता है की प्रजातंत्रिक मूल्य एक–एक कर समाप्त हो जायेंगे और उनका स्थान निरंकुश सत्ता ले लेगी । इसलिए जनता के भीतर प्रश्नों के बीज बोने की जिम्मेदारी उसकी हो जाती है और नाटक के माध्यम से उसे वह पूरा करने की कोशिश करता है । इस नाटक के द्वारा नाटककार यह प्रस्तुत करता है कि लोकतान्त्रिक मूल्यों की रक्षा का एक मात्र माध्यम है, प्रश्न करना और प्रश्नोंसे जूझना ।

इस नाटक में नाटककार का उद्देश्य यह है की अपने व्यक्तित्व को और व्यक्ति की अस्मिता को बचाए रखने के लिए आज के मूल्यहीन परिवेश में सजग रहना जरुरी है, प्रश्नहीनता का सीधा अर्थ आत्महत्या है क्योंकि तब कोई अधिनायकवादी शक्ति हमारा उपयोग अपनी शव साधना के लिए करना शुरू कर देगी ।

इसी क्रम में डॉ0 लक्ष्मीनारायण लाल ने 'मिस्टर अभिमन्यु' नामक नाटक के माध्यम से समकालीन परिस्तिथियों की प्रस्तुत की है । इस नाटक में स्तिथियाँ महाभारत काल सी और कथावस्तु तथा चरित्र समकालीन है । इस नाटक में 'राजन' नमक आई. ए. एस. अफसर की त्रासदी का वर्णन है जो नया परिवर्तन की कामना लेकर सरकारी सेवा में आ जाता है लेकिन भ्रष्ट अवसरवादी राजनीति , सर्वग्रासीसशक्त पूंजीवादी व्यवस्था तथा सुविधा सम्पन्नता की आदि भौतिकवादी मानसिकता के चक्रव्यूह में इस तरह फंस जाता है कि अंत में स्वयं भी उसी चक्रव्यूह का एक हिस्सा बन जाने के लिए मजबूर हो जाता है इस नाटक का 'अभिमन्यु' है 'राजन' । वह मात्र अभिमन्यु नहीं 'मिस्टर अभिमन्यु' है । महाभारत का अभिमन्यु मूल्य अधिष्ठित संस्कारो से संपन्न मूल्यों की रक्षा के लिए संघर्षशील अत्मोसर्गी व्यक्तित्व था लेकिन जनतांत्रिक भरत का 'मिस्टर अभिमन्यु' ' राजन' विगलित खण्डित तथा कायर है, जो योद्धा होने का स्वांग भर रचता है । अंत में राजन जब यह बात पूरी तरह से समझ जाता है कि पूंजीवाद, भ्रष्ट राजनीति अनुगामी नौकरशाही तथा भौतिक संपदा का आदी मानसिकता के सुद्रढ़ चक्रव्यूह से न तो वह लड़कर मुक्त हो पायेगा और न भागकर तब वह भी उसी चक्रव्यूह का एक हिस्सा बन उसे और भी अभेद्या बना देता है।

मिस्टर राजन जानते है की मात्र अभिमन्यु बना रहना , महाभारत काल में संभव होगा दृ 'प्रजातांत्रिक भारत में संभव नही , यहाँ तो मिस्टर अभिमन्यु बनकर ही रहा जा सकता है। अभिमन्यु और मिस्टर अभिमन्यु में महत्वपूर्णअंतर यह है कि 'अभिमन्यु' मूल्य अधिष्ठित संस्कारो से संपन्न वह संघर्षशील चेतना है , जो भ्रष्ट मूल्यों के चक्रव्यूह भेदन के लिए आत्मोसर्ग करती है और मिस्टर अभिमन्यु सुविधाभोगी वह मानसिकता है जो संघर्षशील होने का स्वांग रचते हुए अपने काइयांपन को छिपाये रखने का प्रयास करती है ।

डॉ0 लाल ने अपने नाटक 'अब्दुल्ला दीवाना' में यह साबित कर दिया है कि राजनीतिज्ञ पाखंडी है चोर है , और इन सबसे जनता का मोह भंग करना है । 'अब्दुल्ला' देश की चेतना का प्रतीक है जो इन राजनीतिज्ञों के भुलावे में आकर मर चुकी है आम आदमी की आवाज मात्र वोट देना रह गई हो आम आदमी के अधिकार समाप्त हो चुके है , और उसकी आत्मा भी नहीं रही । सत्तारूढ़ वर्ग का अवसरवाद अब उसका आचरण हो गया है । अतः इस नाटक के माध्यम से नाटककार पुनः जनमानस को चेतन रहने का आवाहन करता है । यदि उसकी चेतना मर गयी तो उसका अस्तित्व समाप्त हो जायेगा ।

इसी क्रम में श्री ज्ञानदेव अग्निहोत्री ने अपनी नवीनतम कृति 'शुतुरमुर्ग' में वर्तमान राजनैतिक दुरव्यवस्था पर करारा व्यंग्य किया है । दिल्ली को शुतुर नगरी परिवर्तित कर देने के कारण वे अन्योक्ति पद्धति की सहायता से वर्तमान की वस्तुनिष्ठा से बचकर वर्तमान की विरूपता को, दिल्लीश्वर के शुतुरमुर्ग सद्रश्य आचरण की ओट में छिपी उसकी दुर्बलता, धूर्तता , प्रवंचकता की ओर उन सबकी व्यर्थता को न्याय के माध्यम से उजागर करने में सफल हुए है ।

**निष्कर्ष**

नाटककार शरद जोशी ने अपने नाटक 'एक था गधा उर्फ अलादाद खां में हमारी समयकालीन भ्रष्ट राजनैतिक तथा प्रशासनिक व्यवस्था की उन सभी विसंगतियों को खोलकर रखा है । जिसके कारण आम आदमी राजनयिकों, अफसरों की निजी स्वार्थ लिप्सा पूर्ति हेतु बलि पशु बनने पर विवश है। नाटककार ने बड़ी कुशलता के साथ कुछ इस तरह प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। कि नवाब हमारी समकालीन 'कुर्सीवादी' अनैतिक राजनीति का प्रतीक बन जाते है । कोतवाल स्वार्थलोलुप प्रशासन व्यवस्था का तथा चिंतक एक ,दो,तीन उन बुद्धिजीवियों के प्रतीक बन जाते हैं जो चंद टुकड़ों के बदले सत्ता की आजीवन गुलामी में अपने तथाकथित कार्य और जीवन की सार्थकता खोजते है । जनकल्याण के लिए नित नयी घोषणा एवं आश्वासन आज की राजनीति की विशेष पहचान है । समाज में, राज्य में क्या घटित हो रहा है, इसके प्रति तथा जनता के सुख – दुखों के प्रति उसको कोई लेना देना नहीं । वह जनता से कटा हुआ है । इसलिए उसे पता नही कि मृत अलादाद गधा है या आदमी । लेकिन जब यह पता चलता है कि अलादाद गधा है तो अपनी रक्षा के लिए साथ ही सत्ताधीशों की रक्षा के लिए शरीफ नागरिक अलादाद की हत्या आवश्यक हो जाती है । कुल मिलाकर आदमी की देह और अलादाद नाम धारण करने वाला यह जीव भी सरकार का 'गधा' ही है जो जिंदगी भर लदे दायित्वों का बोझ ढोते रहा है । दायित्वों का बोझ ढोते रहा है। दायित्व, नैतिकता, राष्ट्र– भक्ति आदि के नाम पर

सत्ताधीशों के बोझ को ढोते रहना और एक दिन उनके स्वार्थ के लिए मर जाना। तात्पर्य यह है कि उसकी म्रत्यु भी अपनी नहीं रही वह राजनीतिज्ञों की महानता सिद्ध करेगी। यह राजनीतिज्ञों द्वारा आम आदमी के शोषण का चरम बिन्दु है।

**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**


1. *रंगमंच : नया परिद्रिश्य दृ डॉ0 रीतारानी पालीवाल*
2. *साहित्यलोचन – डॉ0 श्याम सुन्दर दास प्रष्ठ 79*
3. *हिंदी नाटक उदभव और विकास – डॉ0 दशरथ ओझा*
4. *समकालीन नाट्य विवेचन – डॉ0 माधव सोनटक्के प्रष्ठ 9 ,10*
5. *साणेत्तर हिंदी नाट्य – डॉ0 नीलम राठी प्रष्ठ 321, 22, 23, 24, 25*
6. *नाटककार लक्ष्मीनारायण लाल – डॉ0 नारायणराय– प्रष्ठ 180, 81,82*
7. *हिन्दी नाटक और रंगमंच : पहचान और परख – डॉ0 इन्द्रनाथ मदान*